नवसाक्षर साहित्यमाला

अपना रास्ता लो बाबा

काशीनाथ सिंह

रूपांतरण

महेश दर्पण

चित्र

दीपक दास

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

देवनाथ सिगरेट खरीद रहे थे। तभी बगल की दुकान से एक आवाज सुनाई पड़ी। कोई उनकी गली का रास्ता पूछ रहा था। आवाज जानी पहचानी थी। उस तरफ देखने की हिम्मत न जुटा सके। झटपट घर पहुंचने का छोटा रास्ता पकड़ा।

अंदर के कमरे में बच्चे हंगामा कर रहे थे। पत्नी आशा उन पर बलिहारी हुई जा रही थी। देवनाथ ने बच्चों को डांटा। फिर आशा से कहा, "आराम करने जा रहा हूं। कोई आए तो कहना कि बीमार हैं। ऊपर जंगले से ही कह देना।"

दरवाजा उढ़काया। रजाई खींची और मुंह ढांपकर लेट गये। फिर अचानक सीढ़ियों की तरफ दौड़े "मत कहना बीमार हैं। कह देना कि शहर से बाहर गये हैं।" इसके बाद वे वापस आये और लेट गये।

बाहर कुछ हलचल की आहट मिली। आशा ने दरवाजा खोल दिया—किसी ने पूछा, "सुनो, आसपास कोई देऊ नाम का किराएदार तो नहीं रहता।"

देवनाथ ने पत्नी की तरफ देख अपना माथा ठोंक लिया। उन्हें पत्नी की बुद्धि पर तरस आया। बगैर उससे कहे बाहर आ गये।

"अरे बेंचू बाबा! कहां से चले आ रहे हैं? कोई परेशानी तो नहीं हुई?"

बेंचू बाबा के सिर पर गगरा था। हांफते हुए उसे उतारा। हाथ में उठाए-उठाए बैठक में आये। पगड़ी खोली और देवनाथ की तरफ देखते हुए मुस्कुरा दिये। दोनों हथेलियों से देवनाथ का पूरा शरीर छूकर देखा। आंखे उनके चेहरे के पास ले गये। फफक पड़े, "बचवा। देऊ! तू ही है न? सपना हो गया है तू। अपना गांव घर है, कभी तो आया कर।" बाबा आदतन ऐसे बोल रहे थे जैसे देवनाथ बहरे हों।

देवनाथ के दोनों बच्चे आकर बाहर खड़े हो गये थे।

"अपने ही पोते हैं?" उन्होंने पूछा।
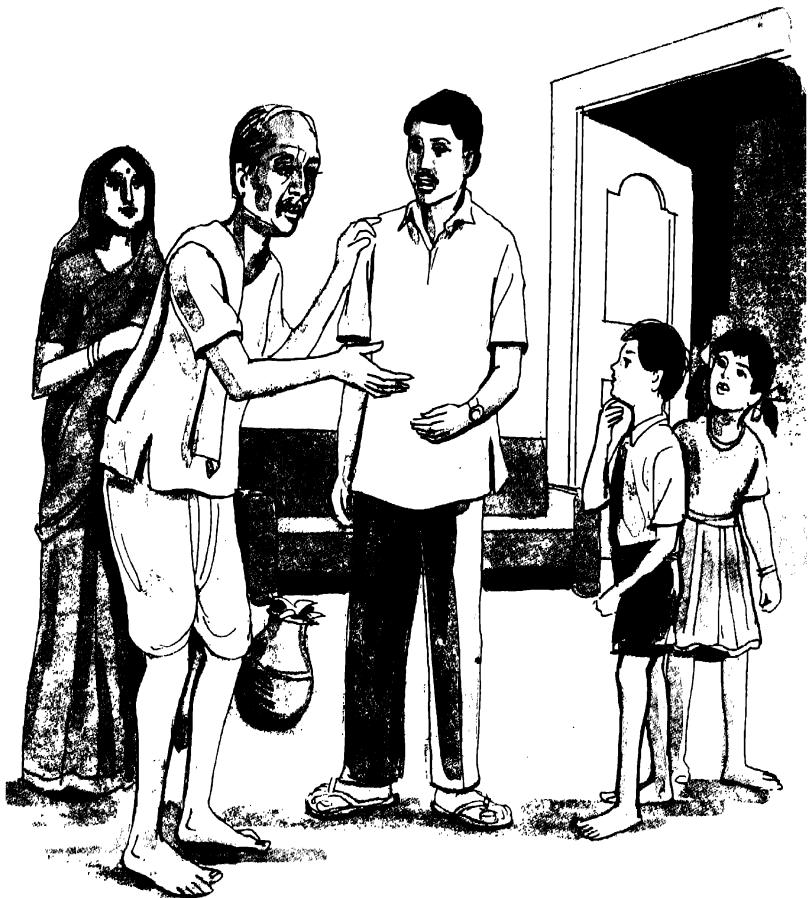
''देवनाथ ने ''हां'' में सि़र हिलाया तो बेंचू बाबा हाथ बढ़ाए खड़े हो गये। बच्चे उन्हें बढ़ता देख उलटे पांव भागे।

''नहीं'' पहचानते। पहचानेंगे भी कैसे? समय जाते देर नहीं लगती। इत्ते से थे, तभी देखा था।''

देवनाथ ने मेज पर गिलास और पानी से भरा जग रखा। फिर कुछ लाने के लिए ऊपर चले गये।

आशा चाय बना रही थी। बच्चे आंखों देखा हाल सुना रहे थे।

"सिर्फ चाय से नहीं चलेगा।" देवनाथ बोले।

"यह देहाती भुच्च कौन है जी?" आशा ने पूछा।

"गांव में हमारे घर के बगल में सुदामा हैं न हमारे पट्टीदार, उन्हीं के बाप हैं?"

आशा रसोई के पीछे वाले कमरे में गयी। तश्तरी में मिठाई के दो टुकड़े रख लाई। देवनाथ तश्तरी को नाक के पास ले गए। बोले, "ये तो बुसी लग रही है। कब की है?"

"पिछले हफ्ते ही तो अगरवाल दे गया था।" आशा चाय डालने लगी।

देवनाथ ने बाबा के लिए हमदर्दी महसूस की। तश्तरी उठाई और नीचे चले आये। बैठक में पानी ही पानी बिखरा पड़ा था। बाबा ने हाथ-पैर धोये होंगे। कुल्ला किया होगा। सामान लेकर वे सीधे अंदर जो चले आये थे।

देवनाथ अंदर घुसे। बाबा उनके पलंग पर लेटे हुए थे। उनके एक पैर पर दूसरा पैर था। चादर पर मटमैले निशान देख कर देवनाथ का दिल बैठ गया।

"लीजिए, चाय है।" देवनाथ ने मेज पर तश्तरी रख दी। बाबा कराहते हुए उठे। मिठाई का एक टुकड़ा खाते हुए बोले, "देहात में ऐसी चीजें कहां

मिल पाती हैं।" फिर कमरे में दिखाई पड़ने वाली हर चीज के बारे में पूछा। संतुष्ट हो चाय गटक ली, "बहुत खूब देऊ। बस एक गैया ही बाकी है।"

थोड़ी देर बाद गगरे में ऊपर झांकता आम का पल्लव बाहर निकाला। फिर फर्श पर बूंदे टपकाते पत्तों समेत अंदर डाल दिया।

"दे आओ। कहां मिलता होगा यहां। बच्चे बाट जो रहे होंगे। बाबा क्या लाये हैं।"

"आप चले किस मतलब से हैं, यह तो बताया नहीं।" देवनाथ ने पूछा।

"बाप किसी मतलब से आता है बेटे के यहां।" बाबा को सवाल बड़ा अटपटा लगा।

"नहीं बाबा, मेरा मतलब था, किसलिए आए हैं?"

"हां, तो ऐसे पूछ। बात यह है बेटा, अस्पताल में भरती होना है। कभी-कभी ऐसा दर्द उठता है कि पूछो मत।" बाबा बोलते गये। देवनाथ मुंह लटकाये सुनते रहे। टट्टी के बारे में, पेशाब के बारे में। भूख के बारे में। दर्द के बारे में।

"चिंता न करना, सुदामा से चोरी कुछ रुपये बचा रखे हैं। पहले तुम ये रस (गन्ने का रस) और होरहा (बिना पकी चना, गेहूं और मकई की बालियां, जो आग की लपटों पर झुलसा कर पकाई जाती हैं।) ऊपर पहुंचा आओ।"

देवनाथ गगरा और गमछा लेकर ऊपर चले गये।

बच्चे कुर्सियों पर बैठे पढ़ रहे थे। गगरा देखते ही दौड़ पड़े। एक ने गगरे की गरदन पर चिपका गोबर दिखाया। एक ने कहा, "हमने कहा था न, बुढवा देखने से ही गंदा लग रहा था।"

"रात को ठहरेगा क्या?" आशा ने पूछा।

"अस्पताल में भरती होने के लिए आये हैं।"

"कह दो फुर्सत नहीं है मुझे।"

"गांव का पता नहीं है तुम्हें। सगे बड़े भाई समान हैं। दस साल ही तो हुए हैं वहां से आए हुए।" देवनाथ ने समझाया।

"अपने बेटे को क्यों नहीं लाए?"

"सुदामा? सोचा होगा, खेती का नुकसान होगा। वह इन्हें घास भी नहीं डालता।"

बच्चे, गगरा घसीट कर मोरी के पास ले आये थे। और अब रस को लुढ़का रहे थे। जब तक देवनाथ पहुंचते, लोटा भर ही बच रहा था। उन्होंने बड़े का कान पकड़कर उठाया।

"बदबू कर रहा था, पापा।"

"छोड़ दो, सुबह महरी को दे देंगे।" आशा की आवाज आई। देवनाथ माथा पकड़कर बैठ गए।

"रोज-रोज का खाना मुझसे नहीं बनेगा। अपनी पतोहू लायें, किराये का कमरा लें।" आशा भुनभुना रही थी।

देवनाथ चुपचाप सिगरेट पीते रहे। सिर खुजलाते रहे। "यही तो मुश्किल है। गांव में मस्ती मारते फिरेंगे। फिर जिसकी तबियत खराब होगी, यहीं चला आयेगा।" इस बार देवनाथ बोल रहे थे।

आशा मुंह फुलाए उठी और रसोई में चली गयी। देवनाथ नीचे चल दिये।

बाबा पलंग पर खर्राटे ले रहे थे। कमरे में जाने कहां से मक्खियां आ गई थीं।

देवनाथ ने सूट पहना। बाबा को जगाया। फिर

उन्हें लेकर डाक्टर गर्ग के यहां चल दिये। स्कूटर पर बाबा को मजा आ रहा था, डर भी लग रहा था। एक बड़ी इमारत के सामने जाकर स्कूटर रूक गया।

देवनाथ बेखटके डाक्टर के पास चले गये। डाक्टर ने बाबा को गौर से देखा। तब कहीं तसल्ली हुई। पहले तो प्रेम से बातें कर रहा था। इसके बाद वह बाबा को परदे के पीछे ले गया। मेज पर उलटा लिटाया। पेट, टट्टी, पेशाब की पूछताछ की। फिर बाहर चला आया।

उसने देवनाथ को अपना संदेह जाहिर किया, "शुरूआती मामला है। कैंसर का संदेह है। मगर देर न करें।" फिर उसने परदे की तरफ देखा और ऊंची आवाज में कहा, "फिक्र की बात नहीं, ठीक हो जायेंगे।"

बाहर आते हुए बाबा ने डाक्टर की आखिरी बात सुनी। डाक्टर ने बाबा से कहा, "आपको कुछ नहीं हैं।"

स्कूटर पर लौटते हुए देवनाथ परेशान थे। कोई पराये भी नहीं। अलग न होते तो सब एक ही थे।

लेकिन करें क्या।

बाबा को घर छोड़कर देवनाथ बाजार चल दिये। दर्द, ताकत और हाजमे की गोलियां लीं। अलग-अलग शीशियों में रखवाई और घर ले आये।

"ये आपकी दवाएं हैं।" देवनाथ ने बताया कि कौन-सी दवा कब खानी है।

"तैने खाना खा लिया?" बाबा ने पूछा।

"अभी नहीं।"

बाबा ने पलकें गिरायीं। फिर सिसकने लगे, "अगहन कातिक से कह रहा था। लेकिन सुदामा को वक्त नहीं मिला। आज ही जब रस ले के चला तो रोक लिया। कहा—"कोस भर गगरा कैसे ले जाओगे?" उसके मन में चोट थी। इतने रस में दो-चार पिरिया गुड बन जाता। उसकी मेहर से कहा—"थोड़ी खुरचन वाली भेली दे दो।" होरहा के बाद क्या खा के पानी पियेगा? लेकिन बेटा अपना दुखड़ा रोयें भी तो किसके आगे।"

कहते-कहते वे फूट-फूटकर रोने लगे—"एक तू है। जब चला था तो सारा गांव हंस रहा था। समझ

रहा था कि तू हमें कोई पट्टी पढ़ा देगा। दिन भर से अपना हरजा करके दौड़ रहा है।"

वे बोलते जा रहे थे, रोते जा रहे थे। देवनाथ की बचपन की बातें। गांव की यादें। देवनाथ को बाबा ने

अपने करीब बुलाया "डाक्टर ने तुमसे भी बताया था न कि कुछ नहीं है।"

"हां तो। आपने भी तो सुना था।"

"बस यही सुनना चाहता था।" बाबा ने देवनाथ की पीठ ठोंकी, "जा अब खा के सो जा। कल तड़के ही चला जाऊंगा।"

नहीं, कल कैसे?" देवनाथ ने कहा।

"नहीं, अब जाऊंगा कल। जा, जा के खा।" बाबा ने उन्हें ठेलकर उठाया।

वे धीरे-धीरे खाने वाले कमरे तक आये। आशा बच्चों को सुना रही थी—बुढ़ऊ की खुराक। उनका चपर-चपर खाने का ढंग। बोलते कैसे हैं।

वे खड़े रहे। उन्हें भूख नहीं थी। अचानक उनकी नजरें गगरे पर चली गयीं। उनकी आंखें भीख गयीं। जंगले के पास चौखट पर बैठ गये। आंखों के आगे अपना गांव उभर आया। वह बगीचा, वह होला पाती। वह चलवा, आमों की लूट। सिंघाड़े चुराना और पोखर में भौंरे पकड़ना। आज कितने साल हो गये। सारा कुछ हवा में खो गया है। और बाबा अब

जा रहे हैं। कल के लिए नहीं, हमेशा के लिए। उन्हें रोका जा सकता है, लेकिन नहीं रोक सकते।

देवनाथ ने सिगरेट जलाई और धुंआ छोड़ा।

"छोड़ो जी, चलो।" उन्होंने अपने आपसे कहा और उठ खड़े हुए।

□

जुपिटर ऑफसेट वर्क्स, दिल्ली-110032 द्वारा मुद्रित